घरेलू हिंसा का सामाजिक आयाम तथा इसे दूर करने के सरकारी प्रयासों का अध्ययन

डॉ. नुदरत आजाद*

सार–संक्षेप–वर्तमान समय में घरेलू हिंसा एक सामाजिक समस्या बनी हुई है, जो हर जगह व्याप्त है, पुरूषों के अधिकारों की अन्तहीन शक्ति के कारण हर युग, हर संस्कृति, हर जाति और धर्म में घरेलू हिंसा का दौर चला आ रहा है। घरेलू हिंसा पुरूष शक्ति का महिला की शारीरिक कमजोरी पर एक सीधा सा प्रक्षेपण है। इसे समाज का विडम्बना पूर्ण विरोधाभास ही कहा जा सकता है कि जिस समाज में आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक व राजनीतिक क्षेत्रों में महिलाओं की भूमिका तेजी से बढ़ती हुई बताई जाती है, उसी समाज में उसके प्रति किये जाने वाले अपराध, उसका तिरस्कार, शोषण व अपमान का स्तर भी बढ़ता ही जा रहा है। नारी के प्रति हिंसा का अविरल चक्र चलता ही जा रहा है। महिलाओं की स्थिति का मूल्यांकन उनकी सामाजिक रूपरेखा से प्रारंभ किया जाना चाहिए। सामाजिक संरचनाएँ, सांस्कृतिक प्रतिमान तथा मूल्य प्रणालियाँ पुरूषों और महिलाओं दोनों की व्यवहार संबंधी सामाजिक प्रत्याशाओं पर प्रभाव डालते हैं, और किसी हद तक समाज में महिलाओं की भूमिकाएँ और स्थिति निर्धारित करते है। इन संस्थाओं में से सबसे अधिक महत्वपूर्ण वंशक्रम प्रणालियाँ, परिवार और सगोत्रता, विवाह और धार्मिक परंपराएँ है। ये पुरूषों और महिलाओं को उनके अधिकारों और कर्तव्यों की धारणाओं के प्रति विचारधारा और नैतिक आधार प्रदान करते हैं। कोई भी कार्य जिसके परिवाद में लिंग पर आधारित हिंसा हो या सम्भावित हो, महिला को शारीरिक, कामुक या मानसिक क्षति या कष्ट का अनुभव होना तथा ऐसे कार्यो की धमकी, जोर जबरदस्ती या मनमाने तरीके से स्वतंत्रता छीनना, व्यक्तिगत जीवन में ऐसी घटना की बारम्बारता होना घरेलू हिंसा के अंतर्गत आते है।

परिचय–घरेलू हिंसा का भारतीय महिलाओं की सामाजिक स्थिति पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा है। घरेलू हिंसा के कारण यहाँ के महिलाओं की सामाजिक सक्षमता एवं बलिष्ठता नीचे दबती जा रही है। घरेलू हिंसा की व्यापकता के कारण अधिकांश महिलाओं की सामाजिक स्थिति ऐसी हो गई है कि वह पुरूष द्वारा निर्धारित परम्परा एवं नियम का अनुसरण करने के लिए मजबूर है। घरेलू हिंसा के कारण महिलाओं को गाँवों से लेकर शहर तक तथा कसबे से लेकर कचहरी तक अपनी समस्या के समाधान के लिए भाग–दौड़ करनी पड़ती है।

***मो.– मिल्कीचक, जिला–दरभंगा**

घर को सहेज कर रखने वाली नारी घर में सबसे अधिक प्रताड़ित है, दिन प्रतिदिन की अपमानजनक स्थितियाँ घर के भीतर ज्यादा है, जैसे प्रताड़ना, बलात्कार, क्रूरता, शारीरिक दण्ड की स्थिति, मार–पीट, गाली–गलौज आदि जिसे अपने ही स्वजनों द्वारा ही अंजाम दिया जाता है, पुरूष सत्ता घर के भीतर ज्यादा जालिम, ज्यादा बेशर्म, ज्यादा बे–रोक टोक होती है, क्योंकि घर में असभ्य कहलाये जाने का कोई डर नहीं होता है, हमारे समाज में हमारे अपने ही घर बेहायाई और शोषण का केन्द्र बने हुए है। महिला पुरूषों की सक्षमता और बलिष्ठता के नीचे दबती चली गयी। धीरे–धीरे वह केवल भोग विलास की वस्तु बनती चली गयी।

विश्व समुदाय की आधी आबादी घरेलू हिंसा का किसी ना किसी रूप में प्रतिदिन सामना कर रही है। सामाजिक एवं मानवीय सरोकारों की दिशा में मानव समाज का यह भाग अधिक प्रतिबद्धता का हकदार है। भारतीय चिंतन का आधार किसी समय 'यत्र नारयस्तु पूजयन्ते, रमन्ते तत्र देवता' रहा है, लेकिन पिछले सैकड़ों वर्षो में समाज में रूढ़िवादी परम्पराओं, मान्यताओं और अंधविश्वासों का वर्चस्व रहा है। ऐसे वातावरण में महिलाओं का उत्पीड़न, शोषण और उनकी उपेक्षा चरम सीमा पर रही है। संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों, सरकारी योजनाएँ, गैर–सरकारी संगठनों के प्रयास और विविध कानूनों के माध्यम से जितनी अधिक अधिकारपूर्ण, शोषण, अत्याचार एवं उत्पीड़न से मुक्ति, पुरूष सत्ता से आजादी और समानता आदि के लिए जितना प्रयास किया गया, उसकी तुलना में परिणाम बहुत कम सामने आये। समाज में महिलाओं के प्रति बर्बरता, अमानवीयता, भेदभाव तथा उनके विरूद्ध अपराधों की घटना में उत्तरोतर वृद्धि महिला अस्तित्व के लिए एक गम्भीर संकट है। महिलाओं के साथ अमानवीय व्यवहार के मूल में यौन विभेद की मानसिकता तथा समाज में कमजोर लिंग के रूप में उसकी स्वीकारोक्ति है।

भारतीय समाज में पारिवारिक जीवन के संदर्भ में समस्त मान्यताएँ ही अत्यधिक दोषपूर्ण है। पारिवारिक जीवन के टूटने पर स्त्री को अधिक दोषी ठहराया जाता है पुरूषों को कम। पुरूषों की चारित्रिक कमजोरी को भी सहज ही माफ कर दिया जाता है, जबकि स्त्री को क्षमा याचना का अवसर कभी नहीं दिया जाता है। आज भी महिलाओं में निरंतर, अधिकारों के प्रति उदासीनता, परम्परा और रूढ़ियों से बंधी दासतापूर्ण मानसिकता, भाग्यवादिता, सभी परिस्थितियों में जीवन जी लेने की मनोवृत्ति और मौन रहने की आदत, जैसी समस्याएँ कमोबेश रूप से वैसी ही बनी हुई है, पितृ सत्तात्मकता, पुरूष प्रधानता और उसकी स्वार्थपरकता, कानून की ढीली–ढाली चाल, पुलिस व समाज की सांमती मानसिकता, सरकारों की संवेदनशीलता और सबसे महत्वपूर्ण महिलाओं की अधिकारों के प्रति उपेक्षा जैसे कारण घरेलू हिंसा की परिस्थितियों के लिए जिम्मेदार है। हालाकि वर्तमान में महिलाएँ निरक्षरता, निष्क्रियता, विवाह के बाद पराधीनता, घुंघट तथा दोयम दर्जे

की हैसियत जैसी परम्पराओं और मान्यताओं का खुले तौर पर खण्डन करने लगी है। पुरूषों को स्वीकार करना होगा कि महिलाएँ पुरूषों की सम्पति नहीं है।

संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष की रिपोर्ट के अनुसार भारत में 15–49 वर्ष की 70 प्रतिशत महिलाऐं किसी न किसी रूप में महिला उत्पीड़न की शिकार हैं। नेशनल क्राइम रिकार्ड ब्यूरो के अनुसार पति और रिश्तेदारों द्वारा महिलाओं पर हिंसा के मामलों में एक साल में 9.3 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। आंकड़ों के अनुसार वर्ष 2018 में महिला उत्पीड़न के 85 हजार 439 मामले दर्ज हुए जिनकी संख्या वर्ष 2017 में 79 हजार 703 थी। यह हालत तो तब है जबकि महिला उत्पीड़न के ज्यादातर मामले थानों तक जाते ही नहीं हैं। गरीब और अनपढ़ ही नहीं, पढ़ी–लिखी और संपन्न महिलाएँ भी महिला उत्पीड़न की यंत्रणा भोगती हैं। महिलाओं पर अत्याचार का सीधा संबंध पुरूष मानसिकता से है जिसमें वह स्वंय को श्रेष्ठ और महिला को निकृष्ट मानता है। यह 'बीमारी' विश्वव्यापी है इसलिए भारत ही नहीं विदेशों में भी महिलाऐं महिला उत्पीड़न का दंश भोग रही है। ब्रिटेन में 25 प्रतिशत महिलाएँ महिला उत्पीड़न की शिकार है। इसी कारण वहाँ सरकार को महिला उत्पीड़न पर अंकुश लगाने के लिए कानून बनाना पड़ा। महिला उत्पीड़न के अलावा महिलाओं को और भी अनेक अत्याचार सहने पड़ते हैं। जो लोग इस कानून को पुरूष विरोधी मानते हैं और बुलंद आवाज में इसके दुरूपयोग की बात कर रहे हैं, उन्होंने महिलाओं पर हो रही हिंसा या अत्याचार के खिलाफ कभी आवाज क्यों नहीं उठाई? महिलाओं पर जुल्म हो तो ठीक, पुरूषों पर कोई आँच नहीं आनी चाहिए। यह रवैया तो नितांत एकपक्षीय है।

केवल कानून बनाने मात्र से महिलाओं को महिला उत्पीड़न से मुक्ति नहीं मिल सकती। ऐसी किसी भी समस्या का समाधान तभी संभव है जब स्त्री–पुरूष मिलकर प्रयास करें। निश्चय ही यह कानून उन बहुसंख्यक महिलाओं को राहत देगा जो रात–दिन किसी न किसी रूप में महिला उत्पीड़न की शिकार हो रही है। मौजूदा परिस्थिति में इसके दुरूपयोग के मुकाबले सदुपयोग की संभावना कहीं ज्यादा है। महिला उत्पीड़न निषेध कानून में हर जिले में कम से कम एक संरक्षण अधिकारी (यथासंभव महिला) नियुक्त करने की बात है। ये अधिकारी महिलाओं की मदद करेंगे, लेकिन चिंता का विषय यह है कि पर्याप्त संख्या में ऐसे अधिकारी कहां मिलेंगे? दहेज निषेध कानून को बने इतने वर्ष हो गए पर अभी तक राज्य सरकारें कुछ ही संरक्षण अधिकारी जुटा पाई है।

इस कानून का पालन ठीक ढंग से हो इसके लिए अधिकारी योग्य और संवेदनशील होने चाहिए। ऐसे अधिकारी जो औरतों के प्रति पूर्वग्रह से ग्रस्त न हों, खुलकर उनकी मदद करने को तैयार हों। अब पहली बार एक कानून कह रहा है कि औरतों को मारना, घर से निकालना, ताने देना या खर्चा न देना जैसी बातें गलत

है। तो जाहिर है इससे महिलाओं को बड़ा सहारा मिलेगा। जरूरत सिर्फ इस बात की है कि कानून की जानकारी जनता तक पहुंचे और इसका सही इस्तेमाल हों। इसके लिए व्यापक जागरूकता अभियान चलाना होगा।

निष्कर्ष–पिछले सात दशकों में महिलाओं का यौन शौषण, छेड़छाड़, दहेज के कारण बहुओं को तंग करने या मार डालने की घटनाएं, कामकाजी औरतों का शोषण, बलात्कार, बाल वेश्यावृत्ति जैसे रूपों में महिला उत्पीड़न में वृद्धि हुई है। स्थिति की गंभीरता समझने के लिए इन ज्वलंत तथ्यों पर नजर डालना पर्याप्त होगा। परंतु यह भी सच है कि समूचे समाज तथा समाज के विभिन्न अंगों में महिलाओं के प्रति होने वाली ज्यादतियों के बारे में पहले से कही अधिक जागरूकता आई है और इनकी रोकथाम की दिशा में उनकी सक्रियता भी बढ़ी है। यह अलग बात है कि जनसंख्या वृद्धि तथा दूसरे कारणों से अपराधों में होने वाली बढ़ोतरी के फलस्वरूप इस सक्रियता के सकारात्मक परिणाम महसूस नहीं किए जा रहे है। सबसे पहले स्वयं महिलाओं के सोंच को ही लें। एक समय था जब औरतों में इतनी हिम्मत भी नहीं थी कि वे अपने साथ होने वाले अन्याय की चर्चा कर पाती। पुलिस तथा कानून की मदद लेने की तो कल्पना करना भी मुश्किल था। परिवार की भलाई तथा इज्जत के नाम पर सब तरह के अन्याय और शोषण को औरतें चुपचाप झेल लेती थी। सार्वजनिक स्थानों पर छेड़छाड़ या मौखिक अपमान झेलना महिलाएँ अपनी नियति मानती थी। घर की लड़की का बलात्कार होने, उसे अगवा किए जाने, छेड़छाड़ अथवा इसी तरह के अन्य सेक्स संबंधी अपराधों की चर्चा या रिपोर्ट करना सामाजिक दृष्टि से अपमानजनक तथा नुकसानदेह समझ जाता था। यही नहीं जो लड़की ससुराल से सताए या पीड़ित किए जाने पर अपने मां–बाप के घर लौट आती थी उसे मां–बाप चाह कर भी शरण देना या उसकी आहत भावनाओं को सांत्वना देने का प्रयास नहीं कर पाते थे। पूरा सामाजिक सोंच महिलाओं को सब सामाजिक मशीन का एक ऐसा पूर्जा समझने का था जिसका काम हर हालत में उस मशीन को सुचारू रूप से चलने में मदद करना है। हर महिला किसी भी विवाद में हमेशा किसी दूसरी महिला का नही, बल्कि पारिवारिक हित यानी पुरूष वर्ग के पक्ष का ही समर्थन करती थी। इसलिए यह कुटिल कहावत प्रचलित की गई कि 'औरत ही औरत की दुश्मन है।

संदर्भ स्रोत

1. महिला एवं सामाजिक विकास संबंधित चुनिंदा आंकड़े 2012–13, पृ. 184.
2. वार्षिक प्रतिवेदन, मा0 सं0 वि0 मं0, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2012–13, पृ. 122.
3. वार्षिक प्रतिवेदन, साक्षरता मिशन प्राधिकार, बिहार सरकार, पटना, 2015, पृ. 151.
4. वार्षिक प्रतिवेदन, महिला एवं बाल विकास मंत्रालय, भारत सरकार, 2014, पृ. 225.
5. वार्षिक प्रतिवेदन, सर्व शिक्षा अभियान, बिहार शिक्षा परियोजना, पटना. 2014, पृ. 111.

****